ओ३म्

आर.एन.आई-संख्या : DELHIN/2007/23260
पोस्टल रजि. संख्या : DL (N) 06/213/14-16
प्रकाशन की तिथि–2 जनवरी 2014

सृष्टि संवत्- 1, 96, 08, 53, 114
युगाब्द-5114, अंक-79-67, वर्ष-7,
पौष कृष्ण पक्ष, जनवरी-2014
शुल्क- 5/ रुपये प्रति, द्विवार्षिक शुल्क-100/ रुपये
डाक प्रेषण तिथि : 5-6 जनवरी, कुल पृष्ठ-8

प्रेषक : सम्पादक, कृण्वन्तो विश्वमार्यम्
आर्ष गुरुकुल, टटेसर जौन्ती, दिल्ली-81

राष्ट्रीय आर्य निर्मात्री सभा

महर्षि दयानन्द सरस्वती

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

(राष्ट्रीय आर्यनिर्मात्री सभा का मासिक विचार पत्र)

E-mail : krinvantovishwaryam@gmail.com सम्पर्क सूत्रः 9350945482 Web: www.aryanirmatrisabha.com

संपादक : हनुमत्प्रसाद 'अथर्ववेदाचार्य' सह-संपादक : आचार्य सतीश

या ते धामानि परमाणि यावमा या मध्यमा विश्वकर्मन्नुतेमा। शिक्षा सखिभ्यो हविषि स्वधावः स्वयं यजस्व तन्वं वृधानः॥ -यजु:० १७। २१

व्याख्यान–हे सर्वविधायक विश्व कर्मन्नीश्वर ! "या ते उत्तेमा" जो तुम्हारे स्वरचित उत्तम, मध्यम, निकृष्ट त्रिविध धाम (लोक) हैं, "शिक्षा सखिभ्यः" उन सब लोकों की शिक्षा हम आपके सखाओं को करो, यथार्थविद्या होने से सब लोकों में सदा सुखी ही रहें तथा इन लोकों के "हविषि" दान और ग्रहण व्यवहार में हम लोग चतुर हों। हे "स्वधावः" स्वसामर्थ्यादि धारण करनेवाले! हमारे "तन्वं वृधानः" शरीरादि पदार्थों करे आप ही बढ़ानेवाले हैं, "स्वयम् यजस्व" हमारे लिए विद्वानों का सत्कार, सब सज्जनों के सुखादि की सङ्गति, विद्यादि गुणों का दान आप स्वयं करो। आप अपनी उदारता से ही हमको सब सुख दीजिए, किञ्च हम लोग तो आपके प्रसन्न करने में कुछ भी समर्थ नहीं हैं। सर्वथा आप के अनुकूल वर्त्तमान नहीं कर सकते, परन्तु आप तो अधमोद्धारक हैं, इससे हमको स्वकृपा-कटाक्ष से सुखी करें।।

सम्पादकीय

ऋषि निर्देश............

वर्त्तमानकाल में जितनी भी विचार धाराओं के आधार पर इस सृष्टि के प्रथम देश की राजनीति चल रही है, वे सारी विचार धाराएं मात्र कुछ ही वर्षों में जन्मी, पली, बढ़ी और अब कुछ तो लगभग समाप्त हो चुकी, और कुछ थोड़े ही वर्षों में होने वाली हैं। और जितनी भिन्न-भिन्न विचारों की राजनीति इस देश में है, प्रायशः वही पूरे विश्व में व्याप्त हैं। जिसमें प्रमुख हैं-पूंजीवादी, समाजवादी, मार्क्सवादी, माओवादी, लेनिनवादी, गाँधीवादी, लोहियावादी और पं दीनदयान उपाध्याय की एकात्ममानववादी। प्रश्न उठता है कि विश्व की तो अभी छोड़ो, परन्तु इस सनातन राष्ट्र में क्या राजनीति बस इतनी ही पुरानी है? इससे पूर्व क्या था? कैसे समाज चलता था? कैसे स्वराज्य और सुव्यवस्था चलती थी? एक आर्य को, एक आर्या को यह सोचना अतीव आवश्यक है, और कोई सोचे या न सोचे, लेकिन जिनका सबसे प्राचीन इतिहास रहा हो, और जो दीर्घकालिक लक्ष्य को लेकर कालातीत राजनीति करना चाहते हों, उन्हें तो सोचना और विचानना ही चाहिए। आर्यो! आर्याओं! हम यही तो चाहते हैं, प्राचीन से प्राचीन किन्तु नवीन से नवीन देश, काल और परिस्थिति से अबाधित अर्थात् सार्वकालिक, सार्वदेशिक और सभी परिस्थितियों में जो मान्य हो, तब आइए हम सर्वव्यापक, सर्वज्ञ प्रभु के संविधान वेद की ओर चलें।

वेद में ईश्वरीय निर्देश है–**अहं भूमिमददायार्यायाहं वृष्टिं दाशुषे मर्त्याय।**

(अहमपो अनयं वावशाना मम देवासो अनु केतमायन्) ऋ० ४/३/२६

मैं ईश्वर, आर्याय (श्रेष्ठ) मनुष्यों के लिए भूमि को देता हूँ। जो निरन्तर हवि देनेवाले मनुष्य हैं, उन्हीं के लिए मैं वृष्टि वर्षा आदि भी प्रदान करता हूँ। लेकिन इस ईश्वरीय निर्देश को जब हम तिरस्कृत कर बैठे, सारी भूमि की तो कौन कहे, जब अपनी ही भूमि अपने पास न रही, भूमि के स्वामी जब अपनी ही भूमि पर दास बन बैठे, तब ऋषिवर दयानन्द ने वेद के पवित्र आधार को ही संसारभर के मनुष्य मात्र के सम्मुख रखते हुए सत्यार्थ प्रकाश में "आर्यराजसभा" की महती आवश्यकता को प्रतिपादित करते हुए आर्यों को मार्गदर्शन करते हुए कहा–

त्रीणि राजाना विदथे पुरुणि परि विश्वानि भूषथः सदांसि।। ऋ०

अर्थात्–ईश्वर उपदेश करता है कि (राजाना) राजा और प्रजा के पुरुष मिल के (विदथे) सुख प्राप्ति और विज्ञान वृद्धिकारक राजा प्रजा के सम्बन्धरूप व्यवहार में (त्रीणि सदांसि) तीन सभा अर्थात् विद्यार्य्य सभा, धर्मार्य्यसभा, राजार्य्यसभा नियत करके (पुरुणि) बहुत प्रकार के (विश्वानि) समग्र प्रजा सम्बन्धी मनुष्यादि प्राणियों को (परि भूषथः) सब ओर से विद्या, धर्म, सुशिक्षा और धनादि से अलंकृत करें।

ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका में पुनः ऋषि दयानन्द ऋग्वेदोक्त सत्यार्थ प्रकाश में वर्णित मन्त्र को उद्धृत करते हुए अपने आर्यों को निर्देश करते हैं-

त्रीनि राजाना विदथे पुरुणि परि विश्वानि भूषथः सदांसि।।
अपश्यमत्र मनसा जगन्वान व्रते गन्धर्वा अपि वायुकेशान् ।।१।।

शेष अगले पृष्ठ पर

सम्पादकीय का शेष.....

(त्रीणि राजाना) तीन प्रकार की सभा ही को राजा मानना चाहिए, एक मनुष्य को कभी नहीं। वे तीनों ये हैं- प्रथम राज प्रबन्ध के लिए एक आर्य्यराजसभा -जिससे विशेष करके सब राज कार्य की सिद्धि की जावें, दूसरी आर्य विद्यासभा-जिससे सब प्रकार की विद्याओं का प्रचार होता जाय, तीसरी आर्य धर्मसभा-जिससे धर्म का प्रचार और अधर्म की हानि होती रहे। इन तीनों सभाओं से (विदथे) अर्थात् युद्ध में (पुरूणि परि विश्वानि भूषथ:) सब शत्रुओं को जीत के नाना प्रकार के सुखों से विश्व को परिपूर्ण करना चाहिए। लेकिन सुख की परिपूर्णता के लिए उस पराधीनता के काल में आवश्यकता थी स्वराज्य की, और तब अंग्रेजों से स्वतन्त्रता की प्राप्ति के संघर्ष करनेवालों में, हमारे महापुरुषों में गरमदल में एक विचारक नेता थे पं. बालगंगाधर तिलक, और हम इतिहास में पढ़ते हैं कि-पं बालगंगाधर तिलक ने एक नारा, एक घोष इस देश को दिया था कि "स्वराज्य हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है।" प्रश्न उठता है- आर्य! आर्याओं! इस नारे में जो सबसे पहला शब्द है-"स्वराज्य।" यह शब्द तिलक जी के पास कहाँ से आया! देश में यह इतिहास नहीं पढ़ाया जाता, अत: हम पं. तिलक जी से ही पूछते हैं, और तब पं. तिलक कहते हैं कि "स्वराज्य और स्वदेशी का सर्व प्रथम मन्त्र प्रदान करने वाले जाज्वल्यमान नक्षत्र थे दयानन्द।"

और हम पढ़ते हैं-सत्यार्थ प्रकाश में ऋषि दयानन्द लिखते हैं-

"कोई कितना ही करे परन्तु जो स्वदेशीय राज्य होता है, वह सर्वोपरि उत्तम होता है। अथवा मत मतान्तर के आग्रहरहित अपने और पराये का पक्षपातशून्य प्रजा पर पिता-माता के समान कृपा, न्याय और दया के साथ विदेशियों का राज्य भी पूर्ण सुखदायक नहीं हैं।

ऐसे स्वराज्य की आकांक्षा सदैव अपने अन्त:करण में रखने वाले ऋषि दयानन्द द्वारा स्थापित आर्यसमाजों को हमारे महान मनीषि पूर्वज विद्वानों ने प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि और सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभाओं के सूत्र में संगठित करने का पुरुषार्थ किया। और इन प्रतिनिधि सभाओं ने ऋषि की आज्ञानुसार आर्यराज सभा, आर्य धर्मसभा और आर्य विद्या सभा के गठन के अनेक प्रस्ताव पारित भी किये, लेकिन कार्यरूप में परिणत कभी भी नहीं कर पाये, अपितु सिद्धान्तहीन राजनितिज्ञों को बिना सिद्धान्त बताये ही, समय-समय पर स्वयं उनके पीछे-पीछे घूमते रहे। जिससे आर्य जनता दिग्भ्रमित रही, और आर्यो की उन्नति दूर ही रही, आर्यो के सिद्धान्त और ऋषिवर की आज्ञा पुस्तकों तक ही सीमित रह गये।

आर्यो! आर्याओं! विद्यार्य सभा का कार्य, विद्या सम्पन्न कर मानवमात्र को सुशिक्षित विद्वान बनाना है, उन विद्वानों में जो सर्वश्रेष्ठ रागद्वेष से रहित, सत्यप्रिय, नि:स्वार्थी हों, ऐसे विद्वान् मिलकर धर्मार्य सभा का निर्माण करते हैं, यही सभा न्याय की स्थापना करती है और अन्याय को चिह्नित कर उसके लिए दण्ड का विधान सुनिश्चित करती है। तभी राजा को भी धर्मार्य सभा के विद्वान् शास्त्रानुसार निर्देश करते थे, "धर्म दड्योसि"।। यही विद्यार्य सभा और धर्मार्य सभा मिलकर राजार्य सभा का निर्माण करते थे। जो समस्त शासन का उत्तरदायित्व निर्वाह करती थी। प्रजा की सुरक्षा, प्रजा की अस्मिता की सुरक्षा, और सुरक्षित प्रजा के लिए अप्राप्त सुखों की प्राप्ति अर्थात् योग और प्राप्त सुख-सुविधाओं को सतत् बनाये रखना अर्थात् क्षेम। यही राजसभा कहती थी- प्रजाजनों आप कर्त्तव्य करो, मैं योगक्षेम का वहन करूंगी। और साथ ही यही आर्यराजसभा विद्यार्य सभा को विद्या और सुशिक्षा के निरन्तर अनुष्ठान में लगाये रहती थी। अर्थात् -

विद्यार्य सभा से धर्मार्य सभा, धर्मार्य सभा से राजार्य सभा और राजार्य सभा से विद्यार्य सभा। विद्यार्य सभा से राजार्य सभा और राजार्य सभा से धर्मार्य सभा। अर्थात्-विद्या से धर्म, धर्म से राज्य, या राज्य से धर्म और धर्म से विद्या, अथवा विद्या से राज्य और राज्य से धर्म।।

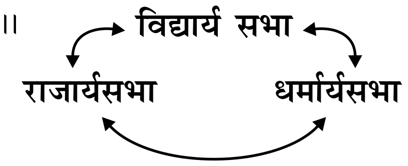

ये तीनों भिन्न-भिन्न होते हुए अभिन्न थी, और अभिन्न होते हुए भी भिन्न-भिन्न थीं। अर्थात् चक्रवत्। प्रश्न उठता है हम चक्र में कहाँ से प्रवेश करें।

आप सभी जानते हैं, हम इसमें प्रवेश तो कर चुके हैं, विद्यार्य सभा अर्थात् आर्य निर्मात्री सभा। अब आर्य क्या करें? आर्य राज्य प्राप्त करें, जैसे कि हम प्रति पूर्णिमा और अमावश्या को प्रार्थना करते हैं- अर्चन्ननुस्वराज्यम्....।। और राज्य प्राप्ति से होगी धर्मस्थापना। तभी तो मनुष्यमात्र ही नहीं प्राणिमात्र को सुख मिलेगा। लेकिन उस सुख से पहले है-संघर्ष, पीड़ा, कष्ट, दु:ख और अपने पूर्वजों की भाँति बलिदान। क्या कर पाओगे? क्या आप तैयार हो? आओ आर्यो! आर्याओं! हम आपका आह्वान करते हैं, काल आपका आह्वान करता है, इतिहास बनाना चाहता है, और भविष्य आपकी प्रतीक्षा कर रहा है। निर्णय आपने लेना है, हम तो विश्वास करते हैं, आप समय रहते हुए अवश्य ही निर्णय लोगे और ठीक निर्णय लोगे, जिससे विद्या फैलेगी, फैलेगा धर्म और फैलेगी **"आर्य राज सभा"**

राष्ट्रीय आर्य निर्मात्री सभा की मासिक गतिविधियाँ

बिना सिद्धांतों को समझे, उन्हें धारण किए मनुष्य का निर्माण नहीं होता है। राष्ट्रीय आर्य निर्मात्री सभा निरन्तर वेद द्वारा प्रतिपादित और ऋषि दयानन्द द्वारा व्याख्यायित सिद्धांतों के माध्यम से निर्माण कार्य में संलग्न है। विगत् माह भी महिला व पुरुषों के लिए निम्न आर्य / आर्या निर्माण सत्र लगाए गए।

आर्य प्रशिक्षण सत्र

	स्थान	दिनांक
1.	डी.ए.वी. इन्टर कॉलेज, गांव-जामपुर, बिजनौर, उ० प्र०	30 नव.-1दि.
2.	आर्य समाज दादू पुर, करनाल, हरियाणा	30 नव.-1दि.
3.	आर्य समाज, गांव तलाव, झज्जर, हरियाणा	30 नव.-1दि.
4.	सिन्धी धर्मशाला, बिलास पुर, छतीसगढ़	14-15 दिस.
5.	रा. व. मा. विद्यालय, पील्लूखेड़ा, जींद, हरियाणा	14-15 दिस.
6.	गांव प्रतापगढ़, कुरुक्षेत्र, हरियाणा	14-15 दिस.
7.	आर्य समाज कुंजपुरा, करनाल, हरियाणा	14-15 दिस.
8.	आर्य समाज, पूठी सामण, हिसार, हरियाणा	14-15 दिस.
9.	एम.एस.मे.प. स्कूल, लक्ष्मीपार्क, नांगलोई, दिल्ली	14-15 दिस.
10.	आर्य समाज आरा, बिहार	21-22 दिस.
11.	धनीराम मेमोरियल लाईब्रेरी, कतलू पुर, सोनीपत	21-22 दिस.
12.	आर्यसमाज, आणंद, गुजरात	21-22 दिस.
13.	गुरुकुल चितौड़ाझाल, मुजफ्फर नगर, उ.प्र.	21-22 दिस.
14.	आर्य समाज करनाल रोड़, कैथल, हरियाणा	21-22 दिस.
15.	गांव पलवल, जिला कुरुक्षेत्र हरियाणा	25-26 दिस.
16.	खण्डेलवाल धर्मशाला, जुरेहड़ा, भरतपुर, राज.	28-29 दिस.
17.	आर्य समाज, भेल, हरिद्वार, उत्तराखण्ड	28-29 दिस.
18.	आर्य समाज लकड़ पुर, फरीदाबाद, हरियाणा	28-29 दिस.
	आर्या प्रशिक्षण सत्र.	
1.	आर्य समाज, तिबड़ा रोड़, मोदी नगर, गाजियाबाद	28-29 दिस.

संध्या काल

पौष मास, शिशिर ऋतु, कलि-5114, वि. 2070
(18 दिसम्बर 2013 से 16 जनवरी 2014)
प्रात: काल: 5 बजकर 45 मिनट से (5.45 A.M.)
सांय काल: 6 बजकर 45 मिनट से (6.45 P.M.)

माघ मास, शिशिर ऋतु, कलि-5114, वि. 2070
(17 जनवरी से 14 फरवरी 2014)
प्रात: काल: 6 बजकर 15 मिनट से (6.15 A.M.)
सायं काल: 6 बजकर 00 मिनट से (6.00 P.M.)

परमात्मा का स्वरूप

-सोनू आर्य भास्कर, कैथल

रचयिता की रचना एक अनोखा कमाल है। संसार में प्रत्येक जगह एक नियम सा प्रतीत होता है कि कोई भी वस्तु बिना बनाए नहीं बनती। सूर्य, चन्द्र, नक्षत्र, अग्नि, जल, वायु, पृथ्वी, आकाश आदि को देख लगता है कि निश्चय ही इनका कोई कर्ता है जिन्हें हम ईश्वर कहते हैं क्योंकि वह सब ऐश्वर्य देने वाला सृष्टि निर्माता है। अत: उसे ईश्वर कहते है अन्यथा परमात्मा का मुख्य व निज नाम ओ३म् है।

हम धरती पर एक चक्र सा देखते हैं कि बनने के बाद वस्तुएं बिगड़ती हैं तथा जन्म के बाद सब मरते हैं। धरती के घूमने से दिन-रात बनते हैं। वृक्षों पर सून्दर व मीठे फल लगते हैं। किन्तु जो फल जहाँ लगना चाहिए वहीं लगता है। सूक्ष्म फल ऊपर व बड़े-बड़े तरबूज आदि फल नीचे लगते हैं। क्योंकि जो ऐसा नहीं होता हो हवा के चलने पर तरबूज आदि गिरकर जीवों को क्षति पहुँचा सकते थे। ऐसे प्रत्येक नियम को नियन्त्रण में रखने वाली शक्ति ही परमात्मा कहलाती है।

ईश्वर ने ही समस्त सृष्टि रची है किन्तु उसे रचकर परमात्मा कहीं गया नहीं अपितु इसके कण-कण में व्याप्त हो रहा है क्योंकि अगर परतात्मा यहाँ कण-कण में व्याप्त न होता तो अवश्य ही सृष्टि के सारे नियम बिगड़ जाते। सब सृष्टि नष्ट भ्रष्ट हो जाती। सृष्टि की आदि से बनी सब चीजें जीव, जन्तु, पशु-पक्षी, पेड़-पौधे आदि आज भी वैसे ही हैं जैसे ये आदि सृष्टि में निर्माण के समय थे। इनमें लेशमात्र भी परिवर्तन अथवा खराबी नहीं आई।

यही परमात्मा के अस्तित्व व व्यापकता का प्रबल प्रमाण है। सर्वशक्तिमान परमेश्वर द्वारा रचित सब वस्तुएं बड़ी अद्‌भुत हैं। अनेकों मनुष्य मिलकर भी एक चांद अथवा वायु को नहीं बना सकते, बेशक टेलिविजन व कम्प्यूटर आदि मनुष्य ने बनाए हैं। परमात्मा व मनुष्य के निर्माण में यही सबसे बड़ा अन्तर स्पष्ट दिखता है कि परमात्मा की रची प्रत्येक वस्तु अपने जैसी वस्तु को पैदा करने का सामर्थ्य रखती है जैसे-मनुष्य बच्चे को जन्म देता है व अनाज आदि के एक दाने से पेड़ बन सकता है। किन्तु मनुष्यकृत वस्तुओं मे ये शक्ति नहीं हैं।

परमात्मा सब सृष्टि को बिना हाथ पांव आदि के बनाता है किन्तु फिर भी उसकी बनाई सृष्टि में लेशमात्र भी कमी नहीं रहती, ये उसकी रचना की विशेषता है।

ईश्वर का स्वरूप (साकार अथवा निराकार ?)

बहुत लोग ईश्वर को साकार मानते है। मूर्ति बनाकर उसे पूजते हैं किन्तु यह उनका भ्रम मात्र है न कि सत्य। देखो यदि ईश्वर को साकार मानें तो कितने दोष आते हैं। ईश्वर का लक्षण सच्चिदानन्द है अर्थात् सत्, चित् आनन्द। सत् का अर्थ है तीनों काल में एक रस। चित-ज्ञानवाला एवं सर्व समय दु:खों का नितान्त अभाव आनन्द कहलाता है। ईश्वर सच्चिदानन्द है इसलिए उसमें कोई परिवर्तन नहीं होता किन्तु सब साकार चीजों में परिवर्तन होता है। शरीरधारी कभी भी दु:खों से नहीं बच सकता। अत: ईश्वर निराकार है। साकार मानने से वह सच्चिदानन्द व निर्विकार नहीं हो सकता क्योंकि साकार पदार्थ में जन्म, वृद्धि, क्षय, जरा, मृत्यु आदि विकार होते है। दूसरा दोष यह है कि ईश्वर सर्वव्यापक नहीं रहता। क्योंकि प्रत्येक साकार चीज एक देशीय होती है तथा साकार वस्तु का जन्म होता है। अत: यदि ईश्वर को साकार मानें तो वह सर्व-व्यापक कैसे रहा?

तीसरा दोष यह है कि ईश्वर अनादि व अनन्त नहीं रहता क्योंकि प्रत्येक साकार प्राणी जन्म लेकर मरता अवश्य हैं चौथा दोष यह है कि ईश्वर सर्वज्ञ नहीं रहता क्योंकि साकार होगा तो एक जगह रहने से दूसरी जगह न हो सकेगा। ऐसा होने से उसे एक देश का ज्ञान रहेगा अन्य का नहीं। तब सबके मन की बात न जान सकने के कारण अन्तर्यामी भी न रहेगा।

पांचवाँ यह कि ईश्वर नित्य न रहेगा। नित्य उसे कहते हैं कि जिसके बनने का कारण न हो। जो पदार्थ के मेल से न बने। तब ईश्वर अनित्य कहा जाएगा। ईश्वर सर्वाधार न रहकर पराधार हो जाएगा। क्योंकि सब सृष्टि को उसने धारण किया तो वह सर्वाधार है पर साकार मानने से वह किसी के सहारे बिना न रह सकेगा। अत: ईश्वर साकार नहीं अपितु निराकार है।

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने ईश्वर को सच्चिदानन्द स्वरूप निराकार, सर्वशक्तिमान, न्यायकारी, दयालु, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र व सृष्टिकर्ता माना है, जो कि पूर्ण एवं विज्ञान संगत है।

आर्य समाज सैक्टर-23-24, रोहिणी दिल्ली द्वारा पुस्तकों का विमोचन

उपरोक्त आर्य समाज द्वारा लोगों में स्वाध्याय की प्रवृति को बढ़ाने के लिए सस्ते मूल्य पर दो पुस्तकों का प्रकाशन कर 22 दिसम्बर को उनका विमोचन किया गया। पुस्तकों का विमोचन राष्ट्रीय आर्य निर्मात्री सभा के महासचिव आचार्य जितेन्द्र जी द्वारा किया गया। इनमें पहली पुस्तक स्वामी श्रद्धानन्द द्वारा रचित स्वयं का आत्म चरित् "कल्याण मार्ग का पथिक" तथा दूसरी पुस्तक स्वामी श्रद्धानन्द द्वारा ही लिखित पं. लेखराम की जीवनी "आर्य पथिक पण्डित लेखराम" है। हमारे समाज का उद्देश्य लोगों को कम से कम मूल्य पर आर्य समाज का साहित्य उपलब्ध करवाना है। इसीलिए इन पुस्तकों को भी लोगों को केवल लागत मूल्य पर उपलब्ध करवाया जा रहा है जिससे अधिक से अधिक व्यक्ति इनका लाभ उठा सकें। इसके लिए आवश्यक है कि न केवल पुस्तकों को स्वयं पढ़ा जाए अपितु उपहार के रूप में भी पुस्तकों का चलन होना चाहिए। और अन्यों को प्रेरित भी करना चाहिए हमारा आर्य समाज शीघ्र ही दो और पुस्तकों का प्रकाशन कर रहा है जिसकी सूचना शीघ्र ही दे दी जाएगी। इन पुस्तकों को प्राप्त करने के लिए निम्न नम्बरों पर सम्पर्क करें :- 9810485231, 9350945482 हमारा उद्देश्य आर्ष साहित्य को घर-घर पहुँचाना है और इसके लिए और पुस्तकों का प्रकाशन भी किया जाएगा।

-आर्य महेश

आर्य समाज सैक्टर-23, 24, रोहिणी, दिल्ली

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

राष्ट्रीय आर्य निर्मात्री सभा की वेबसाईट पर उपलब्ध

राष्ट्रीय आर्य निर्मात्री सभा की वेबसाईट www.aryanirmatrisabha.com व www.aryanirmatrisabha.org से भी पत्रिका को प्राप्त किया जा सकता है। पाठकगण पत्रिका को उपरोक्त साईट से डाऊनलोड कर पढ़ सकते हैं व सत्रों की सूचना भी प्राप्त की जा सकती है।

सूचना

सभी आर्यगणों से अनुरोध है कि राष्ट्रीय आर्य निर्मात्री सभा द्वारा भिन्न-भिन्न स्थानों पर आयोजित होने वाले कार्यक्रमों सम्बन्धी सूचना पत्रिका के ई-मेल पते :- krinvantovishwaryam@gmail.com पर भेंजे साथ ही सम्बन्धित चित्र (फोटो) भी इसी पते पर भेज देंवे जिससे कि उनको समय पर पत्रिका में प्रकाशित किया जा सके

स्वामी श्रद्धानन्द व रामप्रसाद बिस्मिल बलिदान दिवस सम्पन्न

आर्य समाज सेक्टर-23, 24, रोहिणी, दिल्ली के द्वारा रविवार दिनांक 22 दिसम्बर को डी.डी.ए. पार्क, सैक्टर-23, रोहिणी में क्रान्तिकारी संन्यासी स्वामी श्रद्धानन्द व क्रांतिगुरु राम प्रसाद बिस्मिल बलिदान दिवस मनाया गया। कार्यक्रम का शुभारम्भ प्रात: काल 9.30 बजे वैदिक मन्त्रों के साथ यज्ञ से हुआ। तत्पश्चात् वैदिक विद्वानों के द्वारा उपस्थित जन समूह को सम्बोधित किया गया। सर्वप्रथम स्वामी महेश जी द्वारा वर्तमान में आर्य समाज की प्रासांगिकता पर बल दिया तथा लोगों को आर्य सिद्धान्तों को जीवन में अपनाकर उन्नति का आहवान किया। आचार्या इन्द्रा जी द्वारा स्वामी श्रद्धानन्द व रामप्रसाद बिस्मिल के जीवन के बारे में अनेक तथ्य लोगों के सामने रखे व विस्तारपूर्वक इनके जीवन की घटनाओं का वर्णन किया। कार्यक्रम के मुख्य वक्ता राष्ट्रीय आर्य निर्मात्री सभा के महासचिव व आचार्य जितेन्द्र जी ने दृष्टान्तों द्वारा लोगों को समझाया कि किस प्रकार ऋषि दयानन्द ने समाज के उत्थान के लिए कार्य किया। स्वामी श्रद्धानन्द ने कैसे शुद्धि आन्दोलन के द्वारा एक नई शुरूआत की और रामप्रसाद बिस्मिल ने कैसे इस राष्ट्र के लिए अपने जीवन की आहुति दे दी आर्य समाज के सिद्धान्तों पर चलते हुए। कार्यक्रम का संचालन आचार्य सतीश जी द्वारा किया गया। आर्य महेश जी द्वारा आर्य समाज की गतिविधियों की जानकारी दी गई। अन्त में आर्य समाज सैक्टर-23-24 के प्रधान आचार्य लोकेन्द्र देव शास्त्री द्वारा सब को धन्यवाद के साथ कार्यक्रम समाप्त हुआ। इस कार्यक्रम में आर्य समाज सैक्टर-23-24, रोहिणी द्वारा प्रकाशित दो पुस्तकों "कल्याण मार्ग का पथिक" तथा "आर्यपथिक पं. लेखराम" (स्वामी श्रद्धानन्द द्वारा लिखित जीवनी) का विमोचन किया गया।

इस अवसर पर आर्य सुरेश (प्रधान, दिल्ली प्रान्त), आर्य रामवीर (प्रधान, हरियाणा प्रान्त), आर्य निदान (प्रधान, झज्जर जनपद), आर्य सत्येन्द्र (संगठन महासचिव) आर्य कमलदीप (मंत्री, आर्यप्रतिनिधि सभा, दिल्ली), आर्य देवेन्द्र (कोषाध्यक्ष, आर्यप्रतिनिधि सभा, दिल्ली), आर्य समाज विशाखा एन्कलेव, आर्य समाज सैक्टर-7, रोहिणी, आर्य समाज प्रशान्त विहार के कई पदाधिकारी व क्षेत्र के गणमान्य व्यक्ति उपस्थित थे। कार्यक्रम में लगभग आठ सौ व्यक्तियों की उपस्थिति रही। जिनमें से आधी संख्या महिलाओं की थीं जो क्षेत्र में आर्य समाज के प्रभाव का परिचायक है। यह कार्यक्रम आर्य समाज के वार्षिक उत्सव के रूप में मनाया गया तथा इसमें स्थानीय व्यक्तियों की उपस्थिति मुख्य रूप से रही आर्य समाज के सभी पदाधिकारियों (मंत्री नरेन्द्र आर्य, कोषाध्यक्ष मनीष आर्य, उपाध्यक्ष अजय शास्त्री व अन्य सभी सदस्य)द्वारा अथक पुरुषार्थ किया गया तथा आर्य समाज का प्रचार प्रसार सत्रों व कार्यक्रमों के माध्यम से निरन्तर इन क्षेत्रों में किया जा रहा है व अधिक से अधिक लोग आर्य समाज के साथ जुड़ रहे हैं।

-सोनू आर्य, प्रचार मंत्री
आर्य समाज सैक्टर-23, 24, रोहिणी, दिल्ली

उत्तम क्वालिटी के ओ३म् ध्वज व आर्यावर्त्त हवन सामग्री की प्राप्ति हेतु सम्पर्क करें-

आर्य मार्किट, शिवाजी कॉलोनी, रोहतक

-सम्पर्क सूत्र- 9466904890

स्वाध्याय की उपयोगिता

-आचार्य सतीश, दिल्ली

स्वाध्याय का सदा से महत्व रहा है। सभी शास्त्रकारों ने स्वाध्याय को जीवन का एक महत्वपूर्ण अंग माना है। योग दर्शनकार ने तो इसे नियमों में सम्मिलित किया है। इसलिए इसे नियमित रूप से ही किया जाना चाहिए। स्वाध्याय व्यक्ति के जीवन में इसलिए भी महत्वपूर्ण है कि इसके द्वारा व्यक्ति सैद्धान्तिक ज्ञान की प्राप्ति करता है क्योंकि ज्ञान को व्यवहार रूप में लाने के लिए आवश्यक है कि वह पहले हमारे पास सैद्धान्तिक रूप में हो। ज्ञान का वास्तविक उपयोग तो तभी होता है जब वह व्यवहार में आ जाता है, व्यक्ति के आचरण में आ जाता है, लेकिन यदि वह ज्ञान सिद्धान्त रूप में ग्रन्थों में नहीं है तो उसे व्यवहार रूप में लाकर उपयोगी बना पाना संभव नहीं है। दूसरा उस ज्ञान को, सिद्धान्त को व्यवहार रूप में लाने के लिए बार-बार प्रयास किया जाता है और तब तक सिद्धान्त रूप की आवश्यकता रहती है जब तक वह व्यवहार में अभ्यास के द्वारा स्थिर ना हो जाए। इसलिए भी स्वाध्याय की आवश्यकता पड़ती है। इसीलिए विद्वानों ने हमेशा स्वाध्याय पर बल दिया है और ग्रन्थों की रचना की है। स्वयं ऋषि दयानन्द ने सिद्धान्तों को पूर्णतया व्यवहार में अपनाकर आचरण में उतारकर भी अनेक ग्रन्थों की रचना इसीलिए की थी कि उसका लाभ औरों को भी मिल सके।

अत: आर्यो हमारा कर्तव्य बनता है कि हम स्वाध्याय को अपने जीवन में अवश्य अपनाएं। अच्छे ग्रन्थों का अध्ययन न केवल हमारे को सिद्धान्त के प्रति दृढ़ करता है, अपितु हमें बार-बार याद दिलाता रहता है कि यह हमारा सिद्धान्त है, हमें इसको अपनाकर आगे बढ़ना है। स्वाध्याय हमारे जीवन का एक महत्वपूर्ण अंग है और हमें इसे प्रतिदिन करना चाहिए इसीलिए इसे यम-नियमों में स्थान प्राप्त हुआ है। विद्या को प्राप्त करने के पश्चात् उसकी पुनरावृति के लिए भी स्वाध्याय का होना आवश्यक है। सुनकर जो ज्ञान प्राप्त होता है उसको स्थायी बनाने के लिए भी स्वाध्याय का होना आवश्यक है अन्य महापुरुषों के जीवन से हम क्या शिक्षा ले सकते हैं, उसके लिए भी उनके जीवन-चरित का स्वाध्याय होना आवश्यक है। उनके द्वारा किस प्रकार की परिस्थिति में क्या निर्णय लिया गया और उसमें सफलता मिली या असफलता और हम उसी प्रकार की परिस्थिति में ठीक-ठीक निर्णय ले सकें इसके लिए भी महापुरुषों के जीवन चरित्रों का अध्ययन आवश्यक है।

जब हम श्रेष्ठ व सत्य पर आधारित ग्रन्थों का अध्ययन करते है। तो हमारा आचरण भी उसी के अनुसार होना चाहिए और सद्ग्रन्थ अपना प्रभाव व्यक्ति पर छोड़ते ही हैं, इसलिए हमें सद्ग्रन्थों के स्वाध्याय को अपने जीवन का अंग बनाकर उसे अपनाना चाहिए। विद्या वृद्धि और प्राप्त विद्या को स्थायी बनाने का यह एक महत्वपूर्ण साधन है। और विद्या और सिद्धान्तों को अन्यों को पहुँचाने का भी यह एक मुख्य साधन है। हाँ, स्वाध्याय साधन है, साध्य नहीं है। विद्या को सिद्धान्त को जाना जा सकता है, अपने आचरण व व्यवहार को श्रेष्ठ बनाने की प्रेरणा इससे अवश्य मिलती है। लेकिन उसका उपयोग तभी होगा जब हम उसे अपने जीवन में अपनाएगें। उसका लाभ हम तभी उठा पाएंगे जब हम उसे अपने आचरण में लाऐंगे। लेकिन साधन जो उच्च कोटि का है ही, और साधन बिना साध्य को प्राप्त नहीं किया जा सकता। अत: आर्यो आओ इस क्षेत्र में भी अपने आपको आगे बढ़ाएं और स्वाध्याय को जीवन में अपनाकर स्वयं उससे लाभ उठाएं और उसको व्यवहार में लाकर अन्यों के लिए भी प्रेरणा का कारण बनें।

आओ यज्ञ करें!

अमावस्या	1 जनवरी	दिन-बुधवार	मास-पौष	ऋतु-शिशिर	नक्षत्र-मूल
पूर्णिमा	16 जनवरी	दिन-बृस्पतिवार	मास-पौष	ऋतु-शिशिर	नक्षत्र-पुनर्वस
अमावस्या	30 जनवरी	दिन-बृस्पतिवार	मास-माघ	ऋतु-शिशिर	नक्षत्र-उत्तराषाढ़ा
पूर्णिमा	14 फवरी	दिन-शुक्रवार	मास-माघ	ऋतु-शिशिर	नक्षत्र-आश्लेषा

लेखमाला-5

ईशोपनिषद् की व्याख्या

-प० गुरुदत्त विद्यार्थी, एम.ए. द्वारा व्याख्यित

अविद्या के शिकार अनेक हैं और इसके धारण किए हुए रूप बड़े भयानक हैं। उन में से एक वह है, जिसे, कोई और अच्छा नाम न मिलने के कारण, वैज्ञानिक नास्तिकता कह सकते हैं। यह परमाणुओं की सर्वशक्तिमत्ता में विश्वास रखती है। बाहरी पदार्थों की ओर झुका हुआ वैज्ञानिक मनुष्य, जिस का मन प्रकृति और गति की भावनाओं के साथ, और गतिशास्त्र तथा यंत्रविद्याविषयक विवरणों के साथ भरा हुआ है, जो अपनी इन्द्रियों के प्रमाण के विना कभी भी किसी बात पर विश्वास नहीं करता, कच्चे विश्लेषण का काम आरम्भ करता है। वह जीव जन्तुओं, नाड़ियों, पठ्टों, और कोषसमूहों को अनेक वार चीरता फाड़ता और उनकी सूक्ष्म परीक्षा करता है, परन्तु मस्तिष्क के सारे उलझन में, रक्त-वाहिनी नाड़ियों के सारे जटिल जाल में, उसे विज्ञ परमात्मा का कोई चिन्ह नहीं मिलता, सब गति या गतिवान् प्रकृति ही देख पड़ती है। वह अपनी शरीरशास्त्र-विषयक खोजें आरम्भ करता है और सब कहीं रसायनिक और नाड़ीगत क्रिया पर आकर समाप्त कर देता है। अब वह फिर प्रकृति के सेंन्द्रिय विभाग (Organic Department) को छोड़कर प्रत्येक कठिन, तरल, और वाष्पमय पदार्थ को कभी गुठाली में, कभी भबके में, कभी ताप से, कभी बिजली से, कहीं रसायनिक पदार्थों द्वारा और कहीं प्रतिक्रियाओं द्वारा बारम्बार तोड़ता फोड़ता और पृथक-पृथक करता है, परन्तु उसे सब कहीं परमाणु, उनकी रसानयन-प्रीतियां, और विशेष भार ही देख पड़ते हैं, परमात्मा का कहीं भी पता नहीं चलता। प्रत्यक्ष अवलोकन की सुनिश्चित साक्षी पर, और व्यक्तिगत अनुभव की अभ्रान्त वेदी से, ज्ञान की गर्वित विभूति के साथ सिर को उठाये हुए, और प्राकृतिक शक्तियों के स्नायुजन्य बल के साथ मेरुदण्ड को सीधा अकड़ाए हुए, वह एक विज्ञ, सर्वव्यापक, और सब चेष्टा कराने वाले सूत्र के अस्तित्व में विश्वासरूपी अशिष्ठ सिद्धान्त को अन्तिम तिलाञ्जलि दे देता है। परमाणुओं के बल में उसका अपार विश्वास हो जाता है। वह उन्हें ऐसे सरल और अत्यंत सूक्ष्म पदार्थ समझता है जिनका कि व्यवच्छेद और पृथकरण नहीं हो सकता, जो सनातन, और असृष्ट हैं, और जो ऐसी गतियाँ रखते हैं कि उनकी कल्पना भी नहीं हो सकती। ये गतियां उनको किसी ने दी नहीं प्रत्युत उनमें अस्तित्व की आवश्यकता के कारण स्वाभाविक हैं। इन परमाणु-शक्तियों के विस्तृत गड़बड़ काम में विशेष परमाणु निर्वाचन और देवगति के द्वारा मिले, उनका पारस्परिक संयोग हुआ, और उन्होंने अस्थायी रचना ग्रहण करके चेतन जीवन के लक्षण प्रकट किए। जीवन को इस बीज ने, सर्वथा अचिन्तित और अज्ञेय अवस्थाओं के कारण, अनुकूल दशाओं में, (सुयोग या निर्वाचन के कारण अनुकूल), अपना विस्तार और वृद्धि की। उस समय जीवन के लिए भारी संग्राम हो रहा था। इस संग्राम में कई सौभाग्य से सेन्द्रिय-प्राणी उसी परमाणु-प्रलय में दुबारा वापस धकेल दिए गये जिससे कि वे उत्पन्न हुए थे। यह निर्वाण कहलाता है। परन्तु कुछ सौभाग्यशील सेंद्रिय जीव (योग्यता, पात्रता, या सङ्कल्प के कारण सौभाग्यशील नहीं, प्रत्युत किसी न किसी तरह से भाग्यशील) इस भयानक विपत्ति से बच रहे और बढ़े फूले। उनके इन्द्रियविन्यास में परिवर्तन और विकास द्वारा नवीन इन्द्रियां उत्पन्न हो गई। फिर उनमें और परिवर्तन और परिवर्धन होता गया, यहाँ तक कि मनुष्य नामक जीव का आविर्भाव हुआ। अब मनुष्य, परमाणुओं के आकस्मिक संयोग से बना हुआ, यह मनुष्य, अपने तप्त मस्तिष्क के साथ, परमेश्वर और अमरत्व के निर्बल सिद्धान्तों को छोड़ रहा है। क्या कोई समझदार मनुष्य ऐसे सिद्धान्तों में विश्वास रख सकता है? हे ब्रह्मज्ञानी! रेत की नींव पर धर्म्म का भवन खड़ा करने के तेरे यत्न निष्फल हैं! मनुष्य उसी अधम धूलि में वापस लौट जायगा जिस से वह उत्पन्न हुआ था।

ऐसी है वैज्ञानिक नास्तिकता। सब कुछ अनिश्चित और अविश्वास्य है। जीवन उन प्रबल पहियों की रगड़ से उत्पन्न हुई एक आकस्मिक चिङ्गारी मात्र है जिन की अँधी घूमने वाली गति से ब्रह्माण्ड के दृश्य-चमत्कार उत्पन्न होते हैं। भविष्यत्काल की कोई आशा नहीं, पीड़ित पुण्यात्माओं या हताश न्यायाभिलाषियों के लिए परकाल में कोई सान्त्वना नहीं। इसका स्वाभाविक परिणाम यह है कि सर्वशक्तिमान् परमाणुओं का उपासक अधार्मिकता और दुराचार के समुद्र में सिर के बल कूद कर सारे न्याय को बिना किसी वेदना के पाँव तले रोंदता है, बिना किसी निःश्वास के सारे सद्गुणों को दबाता है, और मनुष्य-प्रकृति में जो कुछ श्रेष्ठ और उत्कर्षकारी है उस के खण्डहर पर अपने साहसिकता का तत्त्वज्ञान खड़ा करता है। वह अपने कर्म्मों में, और अपने भावों में साहसिक हो जाता है। या कदाचित तत्त्वज्ञान उसका समर्पण का तत्त्वज्ञान है। साहसिक हो या समर्पित, इसमें मानवीय महात्म्य के साथ नृंशस अत्याचार होने के चिन्ह हैं, और मनुष्य-प्रकृति के साथ अत्याचार होने की शेष सब अवस्थाओं के समान यहाँ भी मनुष्य क्षुब्द, अशान्त, उदासीन, उद्विग्न, जड़ या अपने आप से सर्वथा अचेत हो जाता है। यद्यपि वैज्ञानिक नास्तिकता का यह अन्तिम रूप विपद् युक्त है, तथापि इस का एक कोमल रूप भी है जोकि एक निश्चित और एक अत्युश्च दर्जे की मृत्यु के अनुरूप है। क्योंकि वैज्ञानिक नास्तिक का कम से कम नियमों के या प्रकृति के क्रम के अपरिवर्तनीय और स्थिर स्वरूप में बड़ा दृढ़ विश्वास होता है। वह मूढ़विश्वासी नहीं। कार्य्य जगत् में वह कम से कम पारंगत है। उसका आन्तरिक जीवन चाहे-अशान्त और दुःखमय ही हो पर उसका बाह्य जीवन, निस्सन्देह, पूर्ण सफलता का जीवन है। परन्तु उस मनुष्य की अवस्था बहुत भिन्न है जिसे अविद्या के कारण, न तो इस ब्रह्माण्ड के विज्ञ शासक की भावना है और न इस ब्रह्माण्ड में किसी नियम या किसी क्रम की नियत कल्पना है, परन्तु जो एकेश्वरवादी के उत्कर्षकारी विश्वास या एक नास्तिक की स्वाभविक पराधीनता का स्थान पृथ्वी जैसे तत्त्वों या पत्थर, वृक्ष, प्रत्युत नर-देह जैसे पदार्थों की नीच, क्षुद्र और अपकृष्ट पूजा को देता है। ऐसी ही नीच और अपकृष्ट नास्तिकता से संसार भरा पड़ा है। ईसाइयों की मनुष्यपूजा, मुसलमानों की स्थान पूजा, पौत्तलिकों की मूर्ति पूजा, वेदान्तियों की मायावाद, और हिन्दुओं का अनेकेश्वरवाद; और वह सारी धर्मांधता, स्वमताभिमान, सांप्रदायिक पक्षपात्, असहिष्णुता, और धर्मोन्माद जिन के साथ कि संसार का इतिहास इस प्रकार भरा पड़ा है, मनुष्य समाज की दुःखमय पतित अवस्था का फल और स्थायी प्रमाण हैं। दृश्य पदार्थों की पूजा से उत्पन्न होने वाले अनिष्टों की गणना नहीं हो सकती। इस लिए यह कथन सर्वथा सत्य है कि **"वे लोग महादुःखी हैं जो परमाणुओं को जगत् का निमित्त कारण समझकर पूजते हैं; परन्तु उन से भी बढ़कर दुःखी वे हैं जो परमाणुओं से बने हुए दृश्य पदार्थों की उपासना करते हैं।"**

वैज्ञानिक नास्तिकता और दृश्य पदार्थों की पूजा के नाना रूप सर्वथा भिन्न-भिन्न परिणाम उत्पन्न करते हैं। पर ज्ञान के द्वारा इनसे भी काम लिया जा सकता है, और उस समय ये पहले की सी घृणोत्पादक वस्तुऐं नहीं रहते। ज्ञान का प्रबल हाथ दृश्य-पदार्थों से वह इन्द्रिय-शिक्षा और हितकर उपयोग निकालता है जो कि सारे आन्तरिक विकास का प्राथमिक मूल और दृढ़ आधार-शिला है। इस प्रकार मनुष्य का जीवन-काल एक रम्य, शिक्षाप्रद, और बलवर्धक, यात्रा में परिवर्तित हो जाता है। यह यात्रा मृत्यु के अदृश्य प्रवेश द्वारों में से सनातन शान्ति तक ले जाती है। न केवल ब्रह्माण्ड की दृश्य सामग्री ही इस प्रकार भविष्य के लिए प्रचुर और उपयोगी भण्डार बन जाती है, प्रत्युत अदृश्य और तोड़ फोड़ के अयोग्य परमाणु भी, ज्ञान के हाथ के स्पर्श से, सर्वशक्तिमान विधाता की शक्ति का आसन दीखने लगते हैं। परमाणु वे वाहन मात्र हैं जिनके द्वारा परमेश्वर दृश्य पदार्थों में स्थायी शक्ति और जीवन का संचार करता है। इस प्रकार **"जो मनुष्य दोनों का अनुभव कर लेता है, वह मृत्यु के उपरान्त जो कि दृश्य पदार्थों की उपासना का फल है, अमरत्व का, जो कि परमाणुओं में प्रकट होने वाली दिव्य शक्ति के अनुभव का फल है, उपभोग करता है।"**

-क्रमशः

लेखमाला–9

डेरावाद : सैद्धान्तिक विश्लेषण

-दयानन्द आर्य, बिठमढ़ा, हिसार

प्रश्न : 59 सतगुरु में इन्सान और परमात्मा के सभी गुणों का पूर्ण रूप देखने को मिलता है। वे जो चाहते वही होता; कभी किसी से कुछ नहीं लेते। पृ. 223

टिप्पणी : क्या ये तथाकथित सतगुरु परमात्मा की तरह सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान्, निराकार, सर्वव्यापक, कर्त्तादि गुण युक्त हैं? क्या परमात्मा भी इनकी तरह रोग, शोक, मृत्यु, दुर्घटनादि में फंस सकता है? "जो चाहते वही होता" क्या ये नहीं चाहते कि भ्रष्टाचार, भूख, गरीबी, दुराचार आदि बुराइयाँ मिटें? क्या सिख सतगुरु मुसलमानों से लड़कर हारना-मिटना ही चाहते थे? क्या ये लोग किसी से, शिष्यों आदि से भी, कुछ नहीं लेते? यह निरा झूठ है। अरे। सेवा के नाम पर तन-मन-धन कुछ भी तो नहीं छोड़ते।

प्रश्न : 60 सतगुरु इस दुनिया में रहते हुए भी दुनिया में लिप्त नहीं होते। पृ. 224

टिप्पणी : क्या वे गृहस्थ (पृ. 224) शादी, सन्तानोत्पति, साधन-संचय नहीं करते? फिर दुनिया में लिप्त होना किसे कहते हैं? परमात्मा के स्वरूप या प्रतिनिधि होने का दावा करने वाले ये, सच्चे-योगियों, संन्यासियों की तरह संयम या प्रतिनिधि होने का दावा करने वाले ये, सच्चे-योगियों, संन्यासियों की तरह संयम-तप-त्याग, ब्रह्मचर्य का पालन करके तो दिखाएँ? समस्त दुनियावी सुख-ऐश्वर्य भोगते-भोगते नैतिक उपदेश देना, दिव्यता के दावे करना केवल भोले-भाले लोगों को तो भ्रमा सकता है-विवेकी, निष्पक्ष, सत्याग्रही लोगों को नहीं।

प्रश्न : 61 हम (इसाई आदि) कहेंगे कि हमारे मृत सतगुरू आज भी हमारा ध्यान रख रहे हैं, परन्तु यह केवल एक धारणा है, अवचेतन मन की उपज है जिसे सही साबित करने के लिए कोई प्रमाण नहीं है। हमारी भावनाएँ प्रमाण नहीं हो सकतीं, क्योंकि भावनाओं द्वारा तो कुछ भी साबित किया जा सकता है। पृ. 236।

टिप्पणी : दूसरों से प्रमाण मांगने वाले आप खुद क्या प्रमाण देने, शास्त्रार्थ करने का कष्ट करेंगे? आप 'निश्चित मोक्ष' ईश्वर का साकार रूप होने, पूर्ण ज्ञानी होने का दावा कैसे करते? किसी प्रमाण-परीक्षा को तैयार हो? प्रश्न 38 आदि के कोई जवाब?...आप स्वयं मृत्यु (मोक्ष?) के बाद भी अपने शिष्यों से सम्पर्क-शिक्षा-मार्गदर्शन के दावे करते, कैसे प्रमाण दोगे? आप भी तो अपने भोले-शिष्यों की भावनाओं, प्रभावों, अवचेतन मन की क्रियाकलापों को प्रमाण रूप में, गुरु-कृपा, नूरी-रूप आदि रूप में मान्यता दे, प्रस्तुत कर भ्रमाते हो और अपने डेरों की स्वार्थ सिद्धि करते हो।

केवल यह प्रश्न और इसका उत्तर मात्र भी इन डेरों, गुरुओं के जाल में फंसे लोगों को वह आधार दे सकता है जिसका विवेचन कर वे सत्य-असत्य का निर्णय, निर्धारण कर सकते हैं-बशर्ते वे पूर्वाग्रह को छोड़कर, ईमानदार दृष्टिकोण अपनाएँ।

प्रश्न : 62 कहते हैं–सच्चाई का एकमात्र निश्चित सबूत यही है कि हम उच्च मंडलों में जाकर सतगुरु को नूरी स्वरूप में देख लेंगे। फिर हमारी सब चिन्ताएँ मिट जाएंगी। यदि ऊपरी मंडलों पर जाकर भी सतगुरु से भेंट न हो तो दोष या कमी शिष्य की है। जब शिष्य तैयार हो जाता है गुरु प्रकट हो जाता है। पृ. 241

टिप्पणी : नूरी रूप-दर्शन "मनोवैज्ञानिक वृत्ति" मात्र है। आप पहले ही ऐसे प्रकाशस्वरूप के दिखने-देखने की बात शिष्य के अवचेतन-मन (Unconscious Sub Conscious-mind) में डाल देते हो। यह कोई प्रमाण नहीं हुआ। प्रश्न क्रमांक 61 (आपकी पुस्तक का पृ. 236) में आप भी इसे स्वीकारते व कहते हो। और इस काल्पनिक उपलब्धि में असफलता का दोष भी शिष्य के सिर लगा दिया। बिल्कुल "नाक-कटे-सम्प्रदाय" की तरह असफलता-दोष-उपहास से बचने को कुछ शिष्य बेचारे यही नाटक करते हैं; जो नाटक नहीं कर पाते वे बेचारे गुरु-जाल में फंस खुद को ही दोषी मानते रहते हैं.... और जरा विचारिये-सफलता तो गुरु-कृपा हुई, असफलता का दोष शिष्य का हुआ। अरे! यह कोई प्रमाण नहीं, परीक्षा नहीं हुई। परीक्षा तो स्पष्ट, तर्क-तथ्य से पुष्ट, वैज्ञानिक होती हैं।

प्रश्न : 63 अपनी तैयारी की ओर पूरा ध्यान दें। याद रखें कि हमारा बर्तन साफ हो, ताकि सतगुरु उसमें अमृत रस डाल सकें। पृ. 242।

टिप्पणी : मानव मन में सत्य-दया-प्रेमादि उत्तम तत्वों के साथ असत्य, बुराई, ईर्ष्याएँ, वासनाएँ भी हैं। जब पूर्व तैयारी में यम-नियमादि अभ्यास से सब बुराईयाँ निकल गई तो उसमें केवल सत्य-प्रेमादि अमृत तत्व ही बचते हैं। अरे! ऐसे अमृतमय मन में गुरू क्या अमृत डालेगा? फिर तो इस वैयक्तिक उपलब्धि के सुखद परिणाम ही निहाल कर देते हैं। और सारा श्रेय ये सतगुरु लूट लेते हैं। इस कथन का दोहराव कर-कर के शिष्यों को मानसिक रूप से विभ्रमित करके ताउम्र ठगते रहते हैं।

एक ओर तो ये "पूर्ण-ज्ञानी" पुस्तक पृ. 184 पर आत्म-संयम को योगियों का फिजूल का प्रयास बताते हैं, दूसरी ओर यहाँ पृ. 242 पर इसका उल्ट कहते-"आत्म-संयम के चप्पुओं को मजबूती से पकड़े हुए अभ्यास प्रतीक्षा-अभ्यास-प्रतीक्षा-प्रतीक्षा करते रहो अर्थात् यम-नियम, संयम-सन्तोष का खुद भी उपदेश ही नहीं करते-अति-आवश्यक भी बताते हैं। क्या यही इनके पूर्ण-ज्ञान का प्रमाण है? इसे ईमानदारी कहेंगे या स्वार्थ? विचारिये! विचार कर सत्य-असत्य का निर्णय करते रहिए।

प्रश्न : 64 सत्य किसी भी परीक्षा में अटल रहता है। अपने पुराने विचारों के झूठे अभिमान के प्रति सावधान रहें। अपने पहले के विचारों अर्थात् पूर्वाग्रह को सत्य के मार्ग में बाधा न बनने दें। यह मार्ग कोरे विश्वास का नहीं, विज्ञान पूर्ण है। पृ.242

टिप्पणी : खुद को पाक-साफ दिखाने का अच्छा ढंग है। अपनी कमी-बुराईयों का आरोप दूसरों पर लगा दो....अरे परख और परीक्षा को तो आप तैयार नहीं होते। अभिमान छोड़ शास्त्रार्थ कर सत्य-असत्य का फैसला नहीं होने देना चाहते। विज्ञान की बात केवल दिखाने व झूठ रूप में कहते हो। खुद को ईश्वर का साकार रूप बताते, पूर्ण-ज्ञानी होने का दावा करते हो। क्या है इसका कोई वैज्ञानिक आधार? 'महाशय! सत्य कभी आधारहीन नहीं होता।'

न आप विज्ञान-तर्क-तथ्यों को जानते, न शिष्यों को जानने ही देते...आप कृपया खुद पूर्वाग्रह, स्वार्थ को छोड़ सत्य-असत्य का ठीक निर्णय, जानना-जनाना होने दीजिए। इसी में हम सबका भला निहित है।

प्रश्न : 65 सच्चा सतगुरु किसी भी रूप में धन स्वीकार नहीं करते, वे आत्म-निर्भर होते हैं। वे अपने पद, शक्ति आदि का बखान नहीं करते।

टिप्पणी : सभी डेरे दान लेते, शिष्यों को ग्राहक बना व्यवसाय करते और इनका शिष्यों से शारीरिक श्रम-दान (सेवा) लेना तो जग-प्रसिद्ध है। जहाँ तक निज-बखान की बात है-केवल बखान ही तो करते-कराते रहते हैं। इनके चेले-चेली जब भी देखो, सिद्धान्त-चर्चा न करके, अपने सतगुरुओं के चमत्कारों-शक्तियों के महिमा-मण्डन में ही लगे रहते हैं। ऐसा ये कहाँ से सुनते हैं। डेरों में इनके एजेन्ट छद्म-वेश में बस ऐसी ही कथाएँ सुना-सुना कर नए-नए शिष्यों की (मुस्लिम-जिहादियों की तरह) "ब्रेन-वाशिंग" कर श्रद्धा को अन्ध श्रद्धा में बदलते रहते हैं।

प्रश्न : 66 सतगुरु पर पूर्ण विश्वास, पूर्ण-समर्पण जरूरी है। पृ. 255

टिप्पणी : यहाँ वैदिक अष्टांग-योग के 'ईश्वर-प्रणिधान' अर्थात् ईश्वर के प्रति पूर्ण समर्पण भाव को 'गुरु-प्रणिधान' बना दिया। विचार कीजिए, समर्पण ईश्वर के प्रति लाभदायक, जिसने सृष्टि रची, सब कुछ दिया, जो पालन-कर्त्ता, सर्वज्ञ, न्यायकारी, मुक्तिदाता है या फिर ऐसे तथाकथित गुरुओं के प्रति जो अपना कुछ भी नहीं देते, केवल सपनों के विक्रेता मात्र हैं। बताओ! यह ईश्वर-प्रणिधान का विकास हुआ या ह्रास? अरे! अन्तिम या पूर्ण समर्पण तो अन्तिम या पूर्ण दाता के प्रति ही हो सकता है। अत: आप लोगों का यह सिद्धान्त झूठा, अहंवादी, बखानवादी व स्वार्थ पूर्ण है।

क्रमश:

द्विदिवसीय आर्य/आर्या प्रशिक्षण के बाद सत्रार्थियों के अनुभव

मैं अशोक कुमार, आदरणीय आचार्य योगेश जी का तहे दिल से स्वागत करता हूँ। मैंने इनकी कक्षा में बहुत ही कम समय में बहुत कुछ सीखा। इतने कम समय में इन्होंने हर तरह का ज्ञान प्रदान किया और सबसे बड़ी बात यह है कि इन्होंने सभी बातों को तर्क की कसौटी पर रखा। मैं आचार्य योगेश जी की हर बात से पूर्णत: सहमत हूँ और मुझे बेहद खुशी है कि हमारे राष्ट्र की रक्षा के लिए ऐसे विद्वान आचार्य मिले। ये मेरे लिए और मेरे राष्ट्र के लिए गर्व की बात है और मुझे पूरी उम्मीद है कि ऐसे आचार्य रहेंगे तो हम, फिर से खोया हुआ अपना मान, सम्मान पा सकते है। आचार्य जी मैं वादा करता हूँ कि जो सपना आप हम लोगों के लिए देखें है मैं उसमें पूर्णत: सहयोग करूँगा।

आचार्य जी मेरे दिल में जो बातें इस देश की रक्षा के लिए आ रही हैं हो सकता है मैं उसे अपने शब्दों से आपको समझा न पाऊँ।

अशोक कुमार, आयु-32 वर्ष, स्नातक
निवास-शाह पुर पट्टी, भोजपुर, बिहार

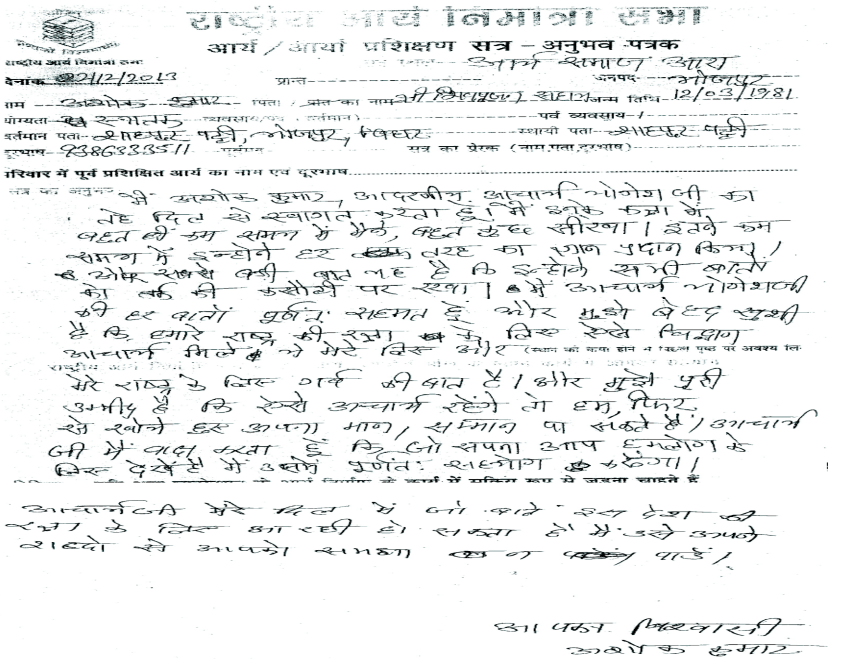
राष्ट्रीय आर्य निर्मात्री सभा
आर्य/आर्या प्रशिक्षण सत्र - अनुभव पत्रक

सत्र का अनुभव बहुत ही अच्छा रहा जैसे मेरी जिन्दगी में आज से नया उजाला आ गया। मुझे नया जन्म मिला हो। मैं मेरे परिवार को आर्य बनाने का पूरा प्रयास करूँगा और मेरे गांव में सब को आर्य बनाने का प्रयास करूँगा।

आर्य निर्माण में मैं हर तरह का सहयोग देना चाहता हूँ।

राउल जी जयेन्द्र, आयु-37 वर्ष, बी.ए.
निवास-गीता भारती सोसायटी आणंद, गुजरात

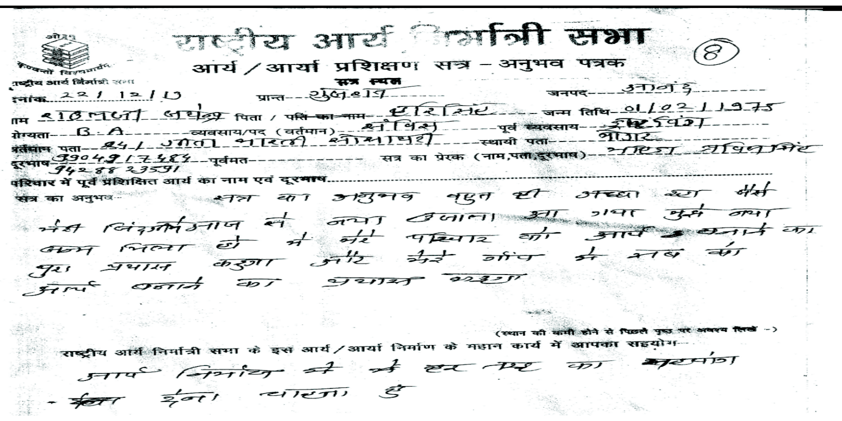
राष्ट्रीय आर्य निर्मात्री सभा
आर्य/आर्या प्रशिक्षण सत्र - अनुभव पत्रक

शिविर में आकर काफी हर्ष हुआ है। और अपने हिन्दू होने, धर्म संबंधित विस्तृत जानकारी आदरणीय आचार्य जी के श्री वचनों से हुई। मुझे अपने देश, धर्म और ईश्वर की सही जानकारी इस शिविर में हुई। मुझे यहाँ आकर अपने अब तक आर्य न हो पाने का मलाल हुआ। अब मैं दृढ़ निश्चिय कर चुका हूँ कि स्वयं आर्य बनूँगा और बाकी अपने हिन्दु भाईयों को आर्य बनाने हेतु प्रेरित करूंगा।

मैंने अब तक आर्य निर्माण कि महान कार्य में कोई सहयोग नहीं किया है किन्तु तन-मन-धन से सहयोग करने की अपनी प्रतिबद्धता स्वीकार करता हूँ।

मोहनीश देवाँगन, आयु-43 वर्ष, इंजिनियर
व्यवसाय, निवास-सुभाष नगर, दुर्ग, छतीसगढ़

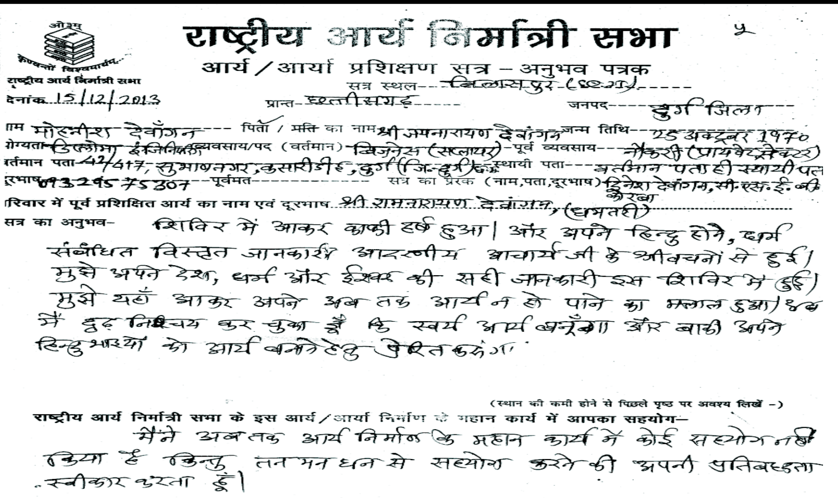
राष्ट्रीय आर्य निर्मात्री सभा
आर्य/आर्या प्रशिक्षण सत्र - अनुभव पत्रक

आगामी आर्य प्रशिक्षण सत्रों की सूचना

राष्ट्रीय आर्य निर्मात्री सभा द्वारा आर्य विद्या देने हेतू द्विदिवसीय सत्रों का आयोजन प्रतिमाह अनेक स्थानों पर हो रहा है। सत्रों की जानकारी समय पर सभी को मिल सके इसके लिए आगामी सत्रों की सूचना, जो अब तक निश्चित हो चुके हैं, दी जा रही है। इसके अलावा भी कई सत्र जो बाद में निश्चित होते हैं उन की सूचना एस.एम.एस. द्वारा आर्यो को भेज दी जाती है। सभी आर्यो से यह भी निवेदन है कि सत्रों की तिथियाँ कम से कम एक माह पहले निर्धारित करके सभा के महासचिव आचार्य जितेन्द्र जी से अनुमति ले लें, जिससे उनकी सूचना भी पत्रिका में दी जा सके।

आगामी आर्य प्रशिक्षण सत्र

क्र.सं.	स्थान	दिनांक	सम्पर्क	दूरभाष
1.	आर्यसमाज, घिटोरनी, दिल्ली	04-05 जनवरी	आर्य बलेश्वर	9313087163
2.	कपूर धर्मशाला, नौगांवा, अलवर, राजस्थान	04-05 जनवरी	आर्य अमरचन्द	9812606465
3.	आर्य सदन कृष्णा कॉलोनी, भिवानी, हरियाणा	05-06 जनवरी	आर्य महेश	9813377510
4.	जी.एस.एस. विद्यालय, गांव छत्तर, जीन्द, हरियाणा	11-12 जनवरी	आर्य सुरेन्द्र	9417501514
5.	आर्य समाज, न्यू पालम विहार, गुड़गांव, हरियाणा	08-09 फरवरी	आर्य रामबीर सिंह	9911675252
आर्या प्रशिक्षण सत्र				
1.	आर्या समाज नगीना, मेवात, हरियाणा	11-12 जनवरी	आर्य अमरचन्द	9812606465

आर.एन.आई.-संख्या : DELHIN/2007/23260
पोस्टल रजि. संख्या : DL (N) 06/213/14-16

आर्य निर्माण राष्ट्र निर्माण

स्वामी श्रद्धानन्द व रामप्रसाद बिस्मिल बलिदान दिवस समारोह (रविवार 22 दिसम्बर 2013) सैक्टर-23, रोहिणी, दिल्ली

आर्य प्रशिक्षण सत्र, (14-15 नवम्बर) पील्लू खेड़ा, जींद, में आचार्य अशोक पाल जी व आर्य जयदेव जी

कृण्वन्तो विश्वमार्यम् पत्रिका की सदस्यता हेतु 100 रुपए द्विवार्षिक शुल्क मनीआर्डर से प्रांतीय कार्यालय के पते पर भेजें, स्थानीय राष्ट्रीय आर्य निर्मात्री सभा के सदस्यों के पास भी शुल्क जमा कर रसीद ले सकते हैं। पूरा पता अवश्य लिखें, न पहुंचने पर दूरभाष से कार्यालय में सूचना दें। जिन सदस्यों की सदस्यता एक वर्ष से अधिक पुरानी है वे अपनी सदस्यता का नवीनीकरण करवा लेवें।

स्वामी व प्रकाशक आचार्य परमदेव मीमांसक एवं सम्पादक आचार्य हनुमत् प्रसाद द्वारा सांगोपांगवेद विद्यापीठ, आर्ष गुरुकुल, टटेसर-जौन्ती, दिल्ली-81 से प्रकाशित एवं सुदर्शन प्रेस, दिल्ली-87 से मुद्रित।

कृण्वन्तो विश्वमार्यम् - समाचार पत्र मे छपे लेखों तथा विचारों से सम्पादक का पूर्णतया सहमत होना आवश्यक नहीं है। क्योंकि अनवधानतावश त्रुटि एवं मतभिन्न होना सम्भव है। सभी न्यायिक विवाद दिल्ली में निपटाये जाएंगे।